© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 7 | Print ISSN : 2395-6011 | Online ISSN : 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

भागवतपुराण में भक्ति और भक्तिरस

प्रा.जी.जे.देसाई
आ.प्रोफ़ेसर
डी.सी.एम कोलेज
वीरमगाम

'भज सेवायाम' धातु से क्तिन प्रत्यय द्वारा भक्ति शब्द की निष्पत्ति होती है | सेवाभाव ही भक्ति है | यह भाव अनेक प्रकार का हो सकता है, परन्तु आसक्तिरहित सेवा भक्त की संज्ञा नहीं मिलती क्योकि 'भक्त' शब्द में 'क्त' प्रत्यय आदिकर्म में आता है| आदिकर्म वह क्रिया है, जो प्रतीतिक्षण के अतिरिक्त पूर्व में और पर में भो विधमान रहे | यह निरन्तरता जिस में रहती है, वही भक्त होता है | अतएव रामायण में आया है – ये त्वां देवं ध्रुवं भक्ता: पुराण परमेश्वरं | प्राप्नुवन्ति तथा कामानिह लोके परत्र च || (युध्धकांड _३१_११७)

तिलक टीका करनेवाले रामाचार्य ने आदिकर्म को न समझ कर 'त्वां' 'प्रति' कहा है और प्रति को शेष माना है | एसा मान लेने पर भक्ति किसे कहेंगे ? क्योकि उस दशा में सकर्मक भज धातु से कर्म में क्त होगा और तब भगवान ही भक्त (सेवित) होगे | यदि वे भक्त का व्याकरणिक स्वरूप जान लेते तो यह त्रुटी न होती | क्योकि पाणिनि का सूत्र है –आदिकर्मणि कत: कर्तरी च | (पा-सू-३.४.७१)

इस सन्दर्भ में जब भगवान को लेते है तब दो अर्थ स्पष्ट होते है – भगवत इदं भागवतं अर्थात जो कुछ भगवान का वृत इत्यादि है, वह भागवत है | इस अर्थ में तस्येदम् (पा.सू.-४_३.१२०) सूत्र लागू होगा | अन्य सूत्र भी है –अधिकृत्य कृते ग्रन्थे (पा.सू.४.३.८४) अर्थात जिसको विषय बनाकर ग्रन्थ की रचना होती है वह भी भागवत है | सर्वत्र अण् प्रत्यय की व्यवस्था है | इन संदर्भो में एक अर्थ अत्यंत महत्वपूर्ण है – भगवान भक्तियस्य स भागवत: यथा उद्धवादि: | यहाँ भक्ति सब्द में कर्मणि क्तिन है | भज्यते सेव्यते इति भक्त: | भावार्थक क्तिन नहीं लेना चाहिए | भगवान पाणिनि ने अपने आदिकर्म को समाविष्ट करने के लिए इस पद का प्रयोग किया लगता है |

आचार्य मधुसुदन सरस्वती कहते है पुण्य और पाप के नाना प्रकार के संसर्ग से जो रतिभाव अपना द्रुतरूप छोड़कर कठोरता धारण करता है , और सवेदन के प्रवाहरूप को धारण कर सकता नहीं | यह भागवत धर्म से द्रुतहोकर धाराप्रवाह की तरह अविच्छन्न रूप धारण करता है, सर्वश्वर में मन की यह द्रभाव प्राप्त वृति को भक्ति कहते है|

दुर्लभ भारत जन्म | भारत की भूमि पर अवतरित होने की देवताओ कामना करते है , एसा भागवत महापुराण में लिखा है –

अहो अमीषां किमकारी शोभनं
प्रसन्न एषा स्विदुत स्वयं हरी: |
यैजन्म लब्धं नृषु भारताजिरे
मुकुन्द्सेवोपयिक स्पुहा ही न: ||

मनुस्मूति में भी कहा है –

एतदेशप्रसुतस्य सकाशादग्रजन्मन : |
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्या सर्वमानवा: ||

वेद के ऋषिओ की सिध्धि मन और वचन से पर एसे कोई अगम्य तत्व के दर्शन में रहती है | उन्होंने शब्द से पर शब्दातीत एसी कोई चरम मूल रूप को शिस्तबध्ध करने का सफल यत्न किया है | इससे उस परमतत्व को

विद्वानो अब शब्दातीत शब्दसमूह एसे दोनों विरुद्धधर्माश्रयी शब्दप्रयोग से सन्मानित करते है और पूजा करते है | सत्यम, शिवम् और सुन्दरम को जानने की मनुष्य के मन की वृति सहज और स्वाभाविक है | उस सत्य को पाने को आग्रही है, शिव एवं कल्याण उसकी ह्रदयगत कामना है तो सुन्दर को देखकर मुस्कुराना इसको सदारूचता है | मनुष्य की सोचने की प्रवृति सत्य की उपलब्धी होती है तब रुक जाती है | मनुष्य की कामना शिव की प्राप्ति के बाद रुक जाती है | प्राचीन ऋषिओ ने परम तत्व को पाने के लिए तिन मार्ग निश्चित किया है | विचारशील के लिए ज्ञानमार्ग कामनामय के लिए कर्ममार्ग और भावनाशील मनुष्यों के लिए भक्तिमार्ग | श्रीमद भागवत में भी ज्ञान, कर्म और भक्ति ये तीन मार्ग बताया है |

- वेदोमे भक्ति:

भारतीय परंपरा के अनुसार भक्ति प्रमेया श्रुतिभ्य: १ | ऐसा शांडिल्यभक्तिसूत्र में महर्षि शांडिल्य का विधान है | वेद में कई ऐसे मंत्र है की जिसमे भक्तिभाव भरपूर है | भगवान् विष्णु के मंत्रो में बहुश्रुत लोग भक्ति बताते है | वहा वेद का ऋषि विष्णु के श्रेष्ठ पदमे मध् का झरना है _ऐसा कहता है –विष्णु: परमे पदे मध्व उत्से :२ |

१-शां.भ.सूत्र - 1-2-10 २ - ऋ.वे.- 1-154-5

और फिर दूसरी जगह स्पस्ट कहा है – महस्ते विष्णो समतिं भजामहे | यहाँ भजामहे धातु भक्ति के भाव का सुचक है |

भक्ति में प्रेम तत्व का होना जरुरी है | बिना प्रेम के भक्ति नहीं होती | प्रेम और भक्ति तो एक दुसरे का पर्याय है , और इस प्रेम का महत्व ऋग्वेद स्पस्टरूप से बताया है –

बृहस्पते प्रथम वाचो अग्रं यत्प्रैरत नामधेयं दधाना |
यदेषां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत्प्रेणा तदेषा निहितं गुहावी ||[३]

सायणाचार्यने भाष्य में लिखा है की –तथा इदानीम एषां श्रेष्ठ पशस्यतम यत् यच्च अरिप्र पापरहित वेदार्थज्ञानम् आसीत एषां तज्ज्ञान गुहा गुहायां निहित गोप्यं तदप्रेणा | मकारलोपच्छादस: | प्रेम्णा आविर्भवती | यहाँ प्रेणा का अर्थ प्रेम द्वारा लिखा है, और मकार का लोप छान्दस मानकर सायणाचार्यने किया है | उसका विद्वानों ने स्वीकार किया है | गुहा में छुपा

हुआ परमतत्व प्रेम से यानी की भक्ति से आविभाव होता है | यही नरसिंह महेता को याद करना पड़ता है – "પ્રેમના તંતમા સંત ઝાલે" अथवा तुलसीदास की प्रसिध्ध उक्ति है – "हरी व्यापक सर्वत्र समाना | प्रेम ते प्रकट होई मै जाना |"

भक्ति मै सामान्यत: भक्त अपने आराध्य देवके पराक्रम का जोश से गान करते है | वेदमें भी यह देखने मिलता है | द्दष्टात इन्द्रस्य नु वीर्याणि प्रवाचम |[४] में इंद्र के शौर्यको जोरशोर से प्रगट करुगा | अथवा विष्णो: कं वीर्याणि प्रवोचम |[५] भगवान को इहलोक में सुख-समृध्धि के लिए या तो परलोक की मुक्ति के लिए भजता दिखाइ पड़ता है | एसी स्तुतिर्या वेद में बहुत है | बलशाली पुत्र, अनुकूल पत्नी, अच्छा भवन या बहुत साधन-दोलत आदि ऋषि के प्रकाम्य विषय है- वह इसकी याचना बारबार करता है | इसमें भी भक्त के ह्रदय की भक्ति अभिव्यक्ति होती है |

एक मन्त्र में इंद्र के पास एक साथ में कई चीजो की ऋषि ने की हुई याचना केसा सुखमय समृद्ध जीवन होगा इसकी झलक प्रस्तुत करता है

इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चितिं दक्षस्य सुभगत्वम् अस्मे |
पोष रयीणाम अरिष्टिं तनूनां स्वामानं वाच: सुदिनत्वम् अह्नाम् || [६]

वरुणदेव के सूक्तों में उत्कट भक्ति का दर्शन होता है | वशिष्ठ जब ह्रदय निचोड़ कर बोलता है – कदानु अंतर वरुण भवानी |[७] तब भक्ति की चरमसीमा का दर्शन होता है | भक्तिमय ह्रदय से भक्त वशिष्ठ ऋषि वरुण देव को याचना करता है –

अव द्रुग्धानि पित्रा सृजा नोङव या वयं चकुमा तनुभी |
अव राजन्पशुतृपं न तायु सृजा वत्सं न दाम्नो वशिष्ठम् || [८]

यहाँ एह नहीं दो-दो उपमाओं से मुक्ति एवं सभी पापो से मुक्त होने के लिए वरुणदेव को याचना करता है |

वैदिक साहित्य में वरुण के सिद्धांत के अतिरिक्त भक्ति शब्द का स्पष्टरूप से प्रयोग हुआ है | तस्य ते भक्ति वांस: स्याम | हम तुम्हारी भक्ति में लीन होइए | चू की शरणागत या प्रपत्ति जिने जिने भक्तिमार्ग के आचार्यो ने भक्ति की पूर्व शरत के रूप में स्वीकार किया है | इसका भी दर्शन वेद साहित्य में दुर्लभ नहीं है | श्वेताश्वतर उपनिषद में प्रपति का सिद्धांत स्पस्ट रूप से अभिव्यक्त हुआ है | -

यो ब्राह्मणं विदधाति पूर्व यो वै वेदाश्च प्रहिणोति तस्मै |
तं ह देवमात्म बुध्धिप्रकाशं मुमुक्षु वै शरणमह प्रपधे || [९]

यही उपनिषद में 'भक्ति' शब्द और उसकी मूल भावना स्पष्टरूप से अभिव्यक्ति हुई है –

यस्य देवे पराभक्तयॅथा देव तथा गुरौ |
तस्यैते कथिता ह्यथा: प्रकाशन्ते महात्मन: || [१०]

जिस की देव में परा(श्रेष्ठ) होगी और जैसी भक्ति देवमें वैसी गुरुमे होगी वह महात्मा को यह (उपनिषद) में निर्दिष्ट किए गए अर्थ प्रगट होते है | इसी तरह भक्ति शब्द और उसके मूल में स्थित वरण या प्रपति जैसे सिध्धांतो के बीज वेदमे अवश्य मिलते है |

- शाडिल्य भक्तिसूत्र में भक्ति : -

भक्ति का सिद्धांत या सम्प्रदाय के रूप में जब जब चर्चा का आरम्भ होता है , तब नारदजी को याद किया जाता है | उन्हें परम्परा में भक्ति मार्ग का आचार्य के रूप में स्वीकृत किया गया है |

३-ऋ.वे.10-71-1 सायभाष्य ६-ऋ.वे.-2-21-6 ९-श्वेता-उप.-06-18
४-ऋ.वे.-01-32-1 ७-ऋ.वे.-7-86-2 १०-श्वेता-उप-06-23
५-ऋ.वे.-1-154-1 ८-ऋ.वे.-7-86-5

उसका नारद भक्तिसूत्र नाम का ग्रन्थ भी मिलता है | नारद ने पहेले हुए शाडिल्य , गर्गपाराशर्य आदि के भक्तिविषयक मतों की चर्चा की है | इसलिए यह नाराद की पूर्व उपस्थित होगे ऐसा मानने में इष्टपति है | इसमे से शाडिल्य का भक्ति सूत्र मिलता है |

मोनियर विलियम्स अपने religious thoughts and Hinduism नामक ग्रन्थ मे लिखता है – शाडिल्य कान्यकृब्ज ब्रह्मणो की गोरा शाखा के विद्वान थे | उसका समय निर्धारण निश्चित नहीं है | लेकिन भगवतगीता ने भक्तियोग को निश्चितरूप से महत्व दिया है | इसलिए शांडिल्य भगवतगीता के पहले हुए होगे , अथवा भगवतगीता की रचना के निकतमय काल में हुए होगे |

उपनिषद साहित्य में शोडिल्य विध्या का निर्दैश अवश्य मिलता है | किन्तु विदानों शोडिल्य विध्या के शांडिल्य और शांडिल्य भक्तिसूत्र के रचनाकार शांडिल्य ये दोनों एक ही होंगे ऐसा मानने को तैयार नहीं है |

शांडिल्य भक्तिसूत्रमें एकसो (१००) सूत्र है | और ये तीन प्रकरणों में विभक्त है | (१) भक्ति की व्याख्या (२) भक्ति के साधन (३) भक्ति का ध्येय , इस विषयों की चर्चा के साथ साथ शोडिल्य ऋषिने जगत की उत्पति, आत्माकिमुक्ति , ब्रह्म , ज्ञान और भक्ति का महत्व ऐसे विषयो की चर्चा की है | उसके अनुसार संसार में जीवात्मा का बन्धन का कारण अज्ञान या अविद्या नहीं है | किन्तु भक्ति का आभाव है | वह लिखते है. संसृतिरेषामभक्तिः स्यान्नाज्ञानात् कारणासिद्धेः |[११] जगत का सर्जन मनुष्य के मन से हुआ है | और केवल भक्ति ही उसे दूर कर सकती है | देखिए अनन्य भावया तद्बुध्दिः बुध्दिलयादान्त्यम |[१२]

शांडिल्य ऋषि के अनुसार भक्ति की इस प्रकार बताई है | सा परानुंरक्तिरी श्वरे |[१३]- इश्वर में (अति) अनुरक्ति-प्रीति ये भक्ति है | यह भक्ति का फल है अमरत्व की प्राप्ति | परमतत्व या इश्वर की प्राप्ति के लिए केवल भक्ति ही एक मुख्य मार्ग है | भगवदगीता और श्रीमद भागवत में भक्ति को हर प्रकार का महत्व दिया गया है | गोपि ज्ञानवान नहीं थी | उसको आत्मा - परमात्मा या जीव और ब्रह्म की एकता का कोइ ज्ञान नही था|फिर भी वह केवल भक्ति से मुक्त हुई थी |ये उसका द्रष्टांत है | इसीलिए भक्ति का ज्ञान या कर्म से ज्यादा महत्व बताया गया है | शोडिल्य ने गोपी भक्ति और पराभक्ति एसे दो प्रकार की भक्ति चर्चा की है | जब भारतीय साहित्य में सुत्रयुग का आरंभ हुआ तब भक्ति एक मार्ग या सम्प्रदाय अथवा योग के रूप में प्रगट हुई | कतिपय विद्वानों का मानना है की भक्ति का इस प्रकार का आरंभ सब से पहले महाभारत के नारद पंचरात्र के भागो में मिलते है |

- नारद भक्ति सूत्र में भक्ति –

भक्ति मार्ग में नारद भक्ति सूत्र का बहुत महत्व है | नारदजी को पुराणोंमें ब्रह्मा के मानसपुत्र रूप के बताया गया है |इस अर्थमे मानव सुष्टि के आरंभ के पूर्व से नारदजी की उपस्थिति है |लेकिन नारद भक्ति सूत्र का रचनाकार नारदमुनि कब हुए होगे ये आज भी शोध का विषय है |

नारद भक्तिससूत्र का आरंभ अथा तो भक्ति व्यारव्यास्याम :|[१४] इस सूत्र से होता है |भारतीय परपरा में अर्थ शब्द को माड्गलिक (मागलिक) माना गया है | कहा है कि

ॐ कार श्चाथशष्द्श्च सुष्टयादौ ब्राह्मणः पुरा |
कंठ भित्वा विनियॅातौ तस्मान माड्गलिकावुभौ ||[१३]

नारदजी के अनुसार भक्ति ये इश्वर में परम प्रेम स्वरुप होती है | (सा त्वस्मिन् परम – प्रेम –स्वरूपा) ओर इस प्रेम की व्यारव्या भी वो देते है , अनिवॅचनीयं प्रेमस्वरुपम्| [१५] प्रेम के स्वरुप का निर्वचन नहीं हो शकता |
प्रेम कि शब्दो से व्यारव्या नहीं की जा सकती |

प्रेम एक ऐसी अनुभूति है | ये शब्दातीत है , शब्दों की मर्यादा से बाहर है | इस विचार को समजाने के लिए नारदजी द्रष्टांत देते है ! इस विचार को समजाने के लिए नारद्र्शी द्रष्टत देते है – मुकास्वादनवत् ![१६] मूक ने चखेला स्वाद की तरह ',किसी मूक को गुड खिलाओ और बाद में पूछा जाय , गुड कैसा है ? ये मूक होने से वर्णन कर शकेगा नहीं , बस इसी तरह प्रेम का वर्णॅन नहीं हो सकता. गुजरती में गुगा का गुड (ગૂંગા નો ગોળ) एसी कहावत ( ) का प्रयोग ये विचार समझाने के लिए होता है | प्रेम की अनुभूति ह्रदय को होती है , और ह्रदय के पास शब्दों को उच्चरित करने की शक्ति नहीं है | जिह्वा शब्दों से वर्णॅन कर सकती है | लेकिन जिह्वा को प्रेम की अनुभूति नहीं है | प्रेम की अनुभूति शब्द से स्फूट नहीं होती ; तुलसीदासजीने भी ये बात अच्छी तरह से रामचरित मानस में कही है – गिरा अनयन नयन बिनु बानी |

११-शां.-भ.सूत्र.-3-6 **१३- शां.-भ.सूत्र.-2** **१५- ना.भ.सूत्र.-51**
१२- शां.-भ.सूत्र.-3-4 **१४-णा.भ.सूत्र.-1** **१६-णा.भ.सूत्र.-52**

नारदजी ने भक्ति को अमृतस्वरूपा कही है –अमृतस्वरूपा च |[१७] प्रेम को हम सब ढाई अक्षर का बोलते है , ईश्क भी ढाई अक्षर का है ; प्रीति भी ढाई अक्षर की है , स्नेह भी ढाई अक्षर का है | वेसे ही ' भक्ति ' भी ढाई अक्षर की है | इसी तरह प्रेम की भक्ति | जैसे ही प्रेम अमर है और प्रेम अमरता (अक्षुण) का ही हो सकता है | " love is immortal and love is of immortality only " वेसे ही भक्ति भी अमर (अक्षुण) है | और भक्ति भी अमरता (अक्षुण) की ही हो सकती है | छांदोग्योपनिषद भी मानता है कि ब्रह्मसंस्थोडमृतो भवति | [१८]

ब्रह्ममें जीव स्थिर होता है ; वह अमर बन जाता है | ये सहज रूप से समझने वाली बात है | बिन्दु सागर में मिले तो सागर बन जाता है | जीव ब्रह्म को पाता है तो वो भी ब्रह्म बन जाता है | नारदजी कहते है की यल्लब्ध्वा युमान् सिद्धो भवति , अमृतो भवति , तृप्तो भवति |[१९] जिस (भक्ति) को पाकर मानव सिद्ध होता है , अमर होता है , तृप्त होता है | ऐसे भक्त मुक्ति की कामना नहीं करते | भक्ति को पाने वाला ये ' आत्माराम ' बनकर अपने भीतर ही भीतर तृप्त हो जाता है |

भक्ति में भक्त (एकाग्रता) एक्चित स्वरुप धारण करता है | इसको अपने इष्ट के बिना अपने मनभावन के बिना कहा भी भाव नहीं होता | वह बिना इश्वर की सभी चीजो से अपना मुह फेर लेता है , भगवति रतिः अभवगति अरतिः| "ईश्वर के प्रति प्रेम का मतलब है , बिना ईश्वर की सभी चीजो में अ-प्रेम (वैराग्य)| इसके अतिरिक्त अपना पुरा आचार ईश्वर को प्रदान करना और ईश्वर का विस्मरण होता है तो अति आकुल-व्याकुलता का अनुभव करना ", इसका नाम ही भक्ति है | इस स्थिति को अधिक बुद्धिगमय और सुस्पष्ट करने के लिए દ્રષ્ટાંત देते है | यथा व्रजगोपिकानाम | [२०] व्रज की गोपिओ की तरह |

- भक्ति रसायन के अनुसार भक्ति :-

  मधुसुदन सरस्वती आध शंकराचार्य के अद्रैत वेदान्त के सिद्धान्तो के पुस्कर्ता थे | ऐसा होने पर भी ह्रदय से वह भगवन कृष्ण के अभूतपूर्व भक्त भी थे | उन्होंने भगवद्गीता पर संस्कृत में टिका भी लिखी है | उन्हों ने भक्ति की मिमांसा करनेवाला भक्तिरसायन नाम का एक सुंदर ग्रंथ भी लिखा है | उसका आरंभ ही प्रभावक है| वो आरंभ करते है-

नवरसमिलितं वा केवलं वा पुमर्थ
परमिह मुकुन्दे भक्तियोगं वदन्ति |
निरुपमसुखसंविद्रुपम स्पृष्टदु:खं
तमहमखिलतृष्टयै शास्त्रदुष्टया व्यनज्मि ||[२१]

यह भक्तिरसायन नामक ग्रंथमे मधुसुदन सरस्वती भक्ति की व्याख्या देते है कि-

द्रुतस्य भगवद्धमोद्वारावाहिकतां गता |
सर्वेशे मनसो वुत्तिभॅत्किरित्यभीधीयते ||२२

भगवान के गुण-श्रवण से काम-क्रोध आदि द्धारा द्रुत हुई ग्राहक की अन्तः करण वृति जब धारावाहिक रूप में भगवदाकार बनी रहती है – वही साध्यभक्ति का स्वरुप है

भगवान के धर्मो का श्रवण, मनन और चिंतन होता है तब भगवदधर्मता आति है, और मन की वृतिए पीगल जाती है| ये पीगली हुई मन की वृतीयो जब धारा की तरह अक्षुण बहती है तब उसे भक्ति कही जाती है | संक्षिप्त में भीतर से पीगल जाना है | जब प्रभुमय बनकर भीतर से जब पिगलते है, तब चिंत में अक्षुण प्रेमका प्रवाह गंगा के प्रवाह की तरह बहने लगता है, और उसे भक्ति कहते है|

शास्त्र में निर्दिष्ट उपायों से बुधजनों को हर क्षण संसार के विषयो में चितको द्रढ बनाना चाहिए और शास्त्र में

२१- मधुसुदन सरस्वती भक्ति रसायन-१-१-१

२२- मधुसुदन सरस्वती भक्ति रसायन-१-१-८

निदिष्ट उपायो से चिंत को भगवान के आद्र रखना चाहिए, द्रवीभूत रखना चाहिए, फल स्वरुप उसमे भक्ति प्रगट होगी |

१७-नो.भ.सूत्र-03 २०-नो.भ.सूत्र-20

१८-ध्वं-उप.-2-23-2 २१-भ.रसायन-1-1-1

१९-नो.भ.सूत्र.-04 २२ भ.रसायन-1-1-4

भक्ति अथाँत प्रेम साधक के हद्दय में यह प्रेम किस क्रम में पल्लवित होगा, इसके लिए उन्होंने विस्तार से चर्चा की है कि-

आदौ श्रद्धा तपः साधुसंगोडथ भजनक्रिया |
ततोडनर्थ निवृतः स्यात् ततो निष्ठा रुचिस्ततः ||
अथासक्तिस्ततो भावस्ततः प्रेमाभ्युदस्चति |
साधकानामयं प्रेम्णः प्रादुभावे भवेत्क्रमः||[२३]

मधुसुदन सरस्वती कहते कि प्रभु स्वयं रस स्वरूप है और वह रसमय होंकर भक्त के मनमे रस स्वरूप में अधिक मात्रा में परिणित होता है |देखिये –

भगवान्पर मानन्दस्वरूप: स्वयमेव हि |
मनोगतस्तदाकार रसतामेंति पुष्कलम || [२४]

जब इस प्रकार कि भक्ति का भक्त के हद्दय में उद्दय होता है ,तब उसमे भगवदरति प्रगट होती है |यह 'भगवदरति' अन्य क्षुद रसों की तुलना में आगिया के प्रकाश के सामने सुयँ के प्रकाश जेसी बलवत्तर होती है |

परिपूणँरसा क्षुदरसेभ्यो भगवदरति:|
खधोतेभ्य ईवादित्यप्रभेव बलवत्तरा || [२५]

- भगवद्गीता में भक्ति :-

विश्व में भगवद्गीता को हिन्दु धमँ के सब से अधिक सम्मानीय ग्रथ के रूप में स्वीकार लिया गया है |

भगवद्गीता को विद्राना प्राचीन उपनिषद मानते हे, उसके लिए उसकी पुष्पिका आदी कों पुरावा के रूप में प्रगट करते हे | भारतीय परंपरा में भगवद्गीता का महत्व क्वचित वेदो से ज्यादा बताया गया हे |

गीता सुगीता कतँव्या किमन्यै शास्त्रविस्तरै: |
या स्वयं पद्मनाभस्य मुखपद्मा द्विनिसृता: ||[२६]

भगवगीता में जब भक्ति पर ध्यान से द्रष्टि करते है तो आश्चर्यजनक सुन्दर विचार प्राप्त होते है | गीता के उपदेश के आरंभ में अर्जुन प्रभु के शरण में हृदय से जाता है -

कार्पव्यदोषोपहतस्वभाव: पृच्छामि त्वां धर्मसंमूढचेता: |
यच्छ्रेय: स्यान्निश्चितं बुहि तन्मे शीष्यस्तेडहं शाधि माँ त्वां प्रपन्नम || [२७]

यहाँ अर्जुन ने शरणागतको स्वीकारा है , ओर शरणागत ही भक्ति अर्जुन जब शुद्ध हदय से प्रभु के शरण में गया , उसके बाद ही भगवान ने गीता का उपदेश दिया हे | इस तरह अर्जुन की भक्ति से गीता का उपदेश का आरंभ हुआ है |

दूसरी और भगवान ने स्पष्ट रूप से अर्जुन को अपना भक्त ओर सखा के रूप में स्वीकृत किया है -

स एवायं मया तेडध योग: प्रोत्क: पुरातन: |
भत्कोडसि में सखाचेति रहस्यं हयेतदुतमम् || [२८]

भगवदगीता के छठवे अध्याय में योग ओर योगी का विस्तार से वर्णन करने के बाद अंत में स्पष्ट कहा है की

योगिनामपि सवेषां मदगतेनान्तरात्मना |
श्रध्धावान्भजते यो मा स में युत्कतमो मत: || [२९]

भक्ति में मन हमेशा प्रभु में लगा रहे, चित सदा प्रभु का चिंतन करे ओर बुद्धि सदा प्रभु का आश्रय करके रहे, यह आवश्यक है | सातत्य बहुत जरूरी है इस बात पर ध्यान देने के लिये एक ही श्लोक में सततम् , नित्यश: ओर नित्ययुत्कस्य ऐसे शब्दों का उपयोग किया है - देखिए.

अनन्यचेता: सततं यो मां स्मरति नित्यश: |
तस्याहं सुलभ: पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिन: || [३०]

भक्ति यानि की प्रेम में प्रेमी का चिंतन सदा रहता है | प्रेम का प्रवाह गंगा के प्रवाह की तरह अक्षुण बहता रहता हे | प्रेम शाश्वत है, ओर ये शाश्वत का ही होता है |

२३-भ.रसायन-1-4-15-16 २५- भ.रसाय-1-1-12 २७-भगवद गीता-2-7 २९- भगवद गीता-6-47
२४- भ.रसायन-1-1-11 २६-महा-भीष्म-34-1 २८- भगवद गीता-4-3 ३०- भगवद गीता-8-14

इसीलिए इसका प्रवाह भी शाश्वत ही होता है | सूखता है उसे प्रेम का झरना नहि कहते | बहने से रुक जाय उसे प्रेम का प्रवाह नहि कहते | इसिलिए भगवान ने भक्ति में सातत्य(एकसुत्रता) पर ओर अनन्यता पर बारबार गीता में जोर दिया है |

प्रभु को रिझाने के लिह बहुत धन दोलत या सत्ता संपति की आवश्यकता नहीं है | प्रभु तो तुलसी के एक पर्ण से या जलकी एक अंजलि से रिझता है | केवल शरत है – भक्ति से – हृदय की सच्ची भक्ति अर्पण करना | प्रभु ने एसे पर्ण पुष्प के फल को स्वीकृत करने का उत्साह गीता में बताया है !

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो में भक्त या प्रयच्छति |
तदहं भक्त्युपहतमश्नामि प्रयतात्मन: || [३१]

प्रभु द्रोपदी की भाजी के एक पर्ण से गजेन्द्र के कमल यानी की पुष्प से और शबरी के बोर से प्रसन्न हुए थे |

भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है की संसार में चार प्रकार के भक्त है वे उन्हें भजते है –

चतुर्विद्या भजन्ते माँ जना: सुकृतिनोऽजृन |
आर्तो जिज्ञासुरथॉर्थी ज्ञानी च भरतषॅभ || [३२]

- भागवत पुराण में भक्ति

समस्त पुराण साहित्य में एक ही श्रीमदभागवत व्यापक एवं लोकप्रिय भक्ति ग्रंथ है | जिसमे भक्ति परंपरा को विकास हुआ | श्रीमदभागवत ने भक्ति भाव में उत्कट प्रेम और रोमांचित करनेवाले तत्वों को चयन करके भक्ति को पूर्णरूप से हृदय की सहज वृतिके अनुसार बनाया | लोक रूची तथा वातावरण सानुकूल होने के कारण लोगो पर उसका गहरा प्रभाव हुआ |

भागवत में जब शुक्रदेवजी परीक्षित राजा को कथा कहने को आसनस्थ हुआ , तब स्वकार्यकुशला देवगण वहॉ अमृत लेकर आया और निवेदन किया की यह अमृत परीक्षित को दो , जिससे ये मृत्यु से बच जायेगा , और हमें कथा दीजिए | फिर भी " क्व सुधा क्व कथा लोके क्व काचः क्व मणि महान् | [३३] ऐसा सोचकर देवो को कथा नहीं दी , क्युकि देव अभक्त थे | इसलिए कथा तो देवो को भी दुर्लभ है |

कथा में परमतत्व (प्रभु) के गुणों का गान किया जाता है | फ़िर भी सच मे ईश्वर के गुणो के रहस्य को कोई जान नहीं पाता | पुष्पदन्त कहता है –

असितगिरि समं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे |
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वि ||
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं |
तदपि तव गुणानुमीशं पारं न याति ||[३४]

कथा सच मे जीवन की पाठशाला है | कथा ये सात्विक मद है | इसके नशे से मनुष्य को मनुष्यत्वमेसे दिव्यता ओर गति करने मे सहारा मिलता है | फिर भी किसिने कथाको भवोषधि कहि है | संसार के सर्प का विष जिसको चढा हो इस को दूर करने के लिए केवल कथारूपी औषध हि उपाय है |

तुलसीदास कहते है कि –

रामकथा कलि कामद गाइ | सुजन संजीवनि भूरि सुहाइ सोइ वसुधातल सुधा तरंगिनी | भय भजनि भ्रम भेक भुअंगिनी |[३५]

आगे भी हा है –

रामकथा ससि किरन समाना | संत चकोर कर हि जेहि पाना ||[३६]

इसके अतिरिक्त कहते है –

रामकथा सुन्दर करतारी | संसय विहग उडाव निहारी |[३७]

राम किं कथा तो सुन्दर करतारी है | ये संसयरूपी पक्षी को उडानेवाली है | संक्षिप्त मे रामकथा से सब संसय मिट जात है |

श्रीमदभागवत महापुराण अनुसार श्रीकृष्ण कि कथा तो वक्ता श्रोता ओर प्रश्नकर्ता तिनो को पावन करनेवाली है | परिक्षित कहता है कि मुझे कथा श्रवण कि तृप्ति हि नहि होति , क्युकी वह पदे पदे स्वाद से भरपूर है –

वयं तु न वितृप्यां उत्तमश्लोकविक्रमे |
यच्छुष्वतां रसज्ञानां स्वादु स्वादु पदे पदे ||[३८]

३१-भगवदगीता -9-26 ३३-पद्मपुराण-उत्तरखंड,भागवत महात्म्य ३५-रामा-बा-का-30-6 ३७-रामा-बा-को-113-1
३२- भगवदगीता-7-16 ३४-शिवम् हिम्न स्त्रोत्रं-32 ३६- रामा-बा-का-46-7 ३८-भो.-पुराणो-10-1-19

गोपीगीत के प्रसिध्ध श्लोक मे भगवान कि कथा को अमृत कही है | ये संतप्तो क जीवन है | कवि इसका गान करते है , और ये पाप का नाश करनेवाली है , श्रवण मंगल और श्री से युक्त अधिक व्यापक और विशेषमें इसका गान जीवन में विपुल प्रदान करनेवाला है |

इस श्लोक का सोंदर्य मननीय है –

तव कथामृत तप्तजीवन कविभिरीडितं कल्मषापहण |
श्रवणमङ्गलं श्रीमदाततं भुवि गुणन्ति ते भूरिदा जना: || [३९]

नलकुबेर ने अपनी ह्रदयगम स्तुति में कहा है की –

वाणी गुणानुकथने श्रवणों कथायां
हस्तौ च कर्मसु मनस्तव पादयोनॅ: |
स्मुत्यां शिरस्तव निवासजगत्पणामे
द्रष्टी: सतां दर्शनेडस्तु भक्तननाम || [४०]

भगवान की कथा का इतना महत्व किसलिए है ? भागवत इसका उत्तर ह्रदयवेधक देता है –

संकीर्त्यमानो भगवानन्त श्रुतानुभावा व्यसन ही पुसाम |
प्रविश्य चितं विधुनोत्यशेषं यथा तमोडकोडभ्रमिवातिवात:|| [४१]

प्रभु के गुणों का संकीर्तन किया जाय तो वह मानव चित में प्रवेश करके उसके अज्ञान को एसी तरह दूर करता है , जैसे सूर्य अंधकार को या पवन बादल को (दूर)हटाकर नभ को निर्मल बनाता है | शरदऋतु में नदी के जल निर्मल हो जाते है , वैसे ही प्रभु भी ह्रदय में बस जाये तो मानव का मन बिना उध्यम निर्मल हो जाता है |

नानाविध प्रकार के दुखो से दवित मनुष्य यदि दुस्तर संसार सागर पार उतरना चाहता है , तो उसके लिए प्रभु पुरुषोतम की कथा अतिरिक्त दूसरा कोई जहाज नहीं है –

संसार सिन्धुमती दुस्तरमुर्तितीर्षो
नान्य: प्लवो भगवत: पुरुषोतमस्य |
लिलाकथा रसनिशेवणमन्तरेण
पुसो भवेद विविधदुःखद वार्दीतस्य || [४२]

रास पंचाध्यायी के अंत में फलकथन में शुकदेवजी कहते है की जो मनुष्य यह प्रभुकी व्रजवधु सहित लीला का श्रध्धा से श्रवण करता है या उसका वर्णन करता है , वह प्रभु की पराभक्ति प्राप्त करके ह्रदय के कामांदी दोषों को सहज में दूर कर लेता है |

विक्रीडितं व्रजवधुभिरिदं च विष्णो:
श्रध्धान्वितोडनुजृणुयादथ वर्णयेद य: ||
भक्ति परा भगवती प्रतिलभ्य कामं
ह्यदरोगमाश्वपहिनोत्यचिरेंण धीर: || [४३]

श्रीमद भागवत को अज्ञानरूप अन्धकार को हटानेवाला अध्यात्मदीप कहा हे – दखिये

य: स्वानुभाव खिलश्रुति सारमेक
मध्यात्मदिप मतिति तिर्षता तमोडन्धम |
संसारीणा करुणयाह् पुराणगृह्यं
तं व्याससूनु मुपयामी गरु मुनीनाम || [४४]

यदि मनुष्य को इश्वर भक्ति प्राप्त करना हो तो उन्हें प्रभु के गुणानुवाद का गान करना चाहिए और अमंगल को मिटानेवाले प्रभु के गुणों का बार बार श्रवण करना चाहिए –

यस्तूतंश्लोक गुणानुवाद: सह्गीयतेडभीक्ष्णममङ्गलघ्न:
तमेव नित्य श्रुणुयादभीक्ष्णं कृष्णेडमला भक्तिमभीप्समान: ||
यहाँ पुराण स्पष्ट करता है की-
धनार्थिनस्तु संसिद्धिर्विंधि सम्पूर्णतावाशात |
कृष्णार्थिंनो ऽगुण स्थापि प्रेमैव विधिसततं: || [४५]

३९-भाग पुराणे-10-31-9 ४१-भागे पुराण-12-12-47 ४३-भो.-पुराण-10-43-40 ४५-स्कं पुराण-वे खडे-भो माहात्म्य-4-41 ४०- भाग पुराणे-10-10-38 ४२-भा.पुराण-12-04-40 ४४-भाग. पुराण-01-02-03 13-3-15

धनार्थी की सिद्धि विधि पूर्ण होने पर निर्भर है | जब कृष्णर्थी के लिए प्रेम प्रभुका प्रेम ही उत्तम विधि है , सच्ची सिद्धि है , इसीलिए भगवन विष्णु नारद को कहते है की –

नाहं वसामि वैकुठे योगिना ह्रदये न च |
मदभत्का यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ||

- भक्तिरस :-

भरतमुनि के मत अनुसार सब से पहले रस की परिकल्पना द्रुहित अर्थात ब्रह्माने की थी |

एते ह्यष्टौरसा : प्रोत्का द्रुहीणेनमहात्मना |
पुनश्च भावान वक्ष्यामि स्थायीसच्चारीसत्वजान || १

स्वयं भरतमुनि ने पहले चार रसो की कल्पना की है ,श्रुगार , रोद्र , वीर और बीभत्स | परन्तु अग्निपुराण के अनुसार जो अक्षर , परब्रह्म सनातन , अज और विभु है , उसका सहज आनंद यदा-कदा अभिव्यक्त हो जाता है |

यह अभिव्यक्ति चैतन्य , चमत्कारपूर्ण और रसमय होती है | उसके आदिम विकार को अहंकार की संज्ञा दि गई है | अहंकार से अभिमान की उत्पति हुई , जो त्रिभुवन में व्याप्त है | उस अभिमान से रति उत्पन्न होकर परिपुष्ट हुई | तदन्तर राग में श्रुगार , तीक्ष्णता से रोद्र , गर्व से वीर और संकोच से बीभत्स रस की उत्पति हुई | इसके बात पुन: शृंगार से हास्य , रोद्र से करुण , वीर से अद्भुत और बीभत्स से भयानक रसो की अवतारणा हुई |

इश्वर रसरूप है | श्रुतियोने भी " रसों वै स: " कहकर उसकी पृष्टि की है | अतएव रसरूप इश्वर को रस का आधार मानना तथा उसके द्वारा रस का विकास दिखलाना सर्वथा समाचीन प्रतीत होता है | रस वस्तुत: रसरूप बह्म के आनंद की ही अभिव्यक्ति है | आनंद का यथार्थ उद्रेक ही रसत्व को प्राप्त होकर विभिन्न रसों की सृष्टि करता है

उपयुक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता हे की शृंगार , वीर , रोद्र और बीभत्स इन चार मुख्य रसो के बाद पुन: आठ रसों की उद्भावना की गई | कव्यप्रकाशकार ने भी पहले आठ ही रसों और उनके आठ स्थायिभावो की चर्चा की –

श्रुङ्गार हास्य करुण रौद्रवीरभयानक |
बिभत्साद्भुतसंज्ञौ चेत्यष्टो नाट्ये रसा: स्मृता: ||
रति हासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहो भयं तथा |
जुगुप्सा विस्मयश्चेति स्थायिभाव: प्रकितिता: || ३

बाद मे उन्होने निर्वेद को निर्वेदस्थायीभावोनवमो स्थायीभाव कहकर शान्तरस नामक नवम रस की उद्भावना की-

रर्तिदेवादी विषया व्यभीचारी तथाडज्जितः भाव :प्रोत्क :|| ४

ये स्थायिभाव ही विभाव अनुभाव ओर सञ्चारि भाव कि सहायता से लोकोतर आनन्दरूप मे परिणत होकर अभिव्यक्त होते है ओर रस कि संज्ञा प्राप्त करते है |

भरतोत्क आठ रसों के अतिरिक्त नवं शांत रस को अभिनव गुप्त , आनंदवर्धनजगन्नाथ मम्मट आदिने स्वीकार किया है | अधिकतर विद्वान लोग शांतरस का स्थायीभाव शम या निर्वेद या तृषाक्षय अथवा आत्मविश्रामजन्य परमानंद के महत्व को समझकर शांतरस को अनिवार्य रस मानते है | क्यूकी संसार में जितना इच्छित सुख है , जितना दिव्य और महान सुख है | वह तृष्णानाश के सुख के सोलह्वे भाग बराबर भी नहीं है | मानवजीवन में त्याग द्वारा ही सच्ची शांति और परमानन्द की प्राप्ति होती है | और एसे ही शांतरस को स्वीकृत करना सही है | वात्सल्यरूप स्नेह – स्थायीभाववाले वात्सल्य को स्वतंत्र रसरुपे कतिपय आचार्यो ने स्वीकृत किया |

इसके अतिरिक्त नए नए रसो की कल्पना होती रही है , जिसमे मधुररस या भक्तिरस उज्ज्वल , सख्यरस , लोल्यरस , मृग्यरस , कार्पण्यरस ,विडनकरस , प्रशांत तथा मायारस , प्रक्षोभ और क्रान्तिरस , देशभक्तिरस आदि अनेक रसो का स्वीकार किया गया | जिसमे भक्तिरस विशेषरूप से उल्लेख करने लायक और महत्वपूर्ण है | भक्तिरस को स्वतंत्र रस स्वीकृत करने के लिए पुरावाओ का उल्लेख किया जा सकता है |

भरतमुनि ने भक्ति को शांतरस का विषय कहकर ज्ञान और भक्ति दोनों का मिश्रण किया है परन्तु ज्ञान विरागप्रधान और भक्ति रागप्रधान होती है | इसलिए दोनों का मिश्रण करना कठिन है | इसलिए उसे स्वतंत्र रस ही मानना चाहिए |

साहित्यदर्पण में रति की व्याख्या इस प्रकार दि है –

रतिमॅनो ऽनुकुलेऽर्थॅ मनस: प्रवणायितम |
अर्थात मन का अनुकूल वस्तु से प्रमार्द होना ही रति है | ५

१-नाट्यशास्त्र 6-16 २-ते.उपनिषदे-2-7-1 ३-काव्यप्रकाश-4-29-30 ४-काव्यप्रकाश-4-35-36 ५-साहित्यदर्पण-3-186

भक्ति का स्थायीभाव भी देवादि विषयवाली रति है |भक्त के ह्रदयमें स्थित प्रेम में इतनी तन्मयता रहती है , जितनी रसोंत्कर्ष के लिए आवश्यक है | रति की उपर्युक्त व्याख्या में रति को व्यापक द्रष्टिबिंदु से स्पस्ट किया गया है |

भक्ति में आलंबन विभाव , अनुभाव , व्यभिचारी आदि रस के सभी अंग – उपांगो का समुचित विकास होता है | उसका स्थायीभाव देव-रति , अनुभाव अनन्यासक्तिजनित अश्रु रोमांच आदि और व्यभिचारी हर्ष औत्सुक्य , आवेग , चातुर्य , देन्यस्मरण आदि है | भक्ति के आलंबन पूर्णावतार कृष्ण या राम आदि है | भक्त के ह्रदय में अपने आराध्य प्रति प्रगट होनेवाली भावनाओं का चरम उत्कर्ष होता है , और वे रस अवस्था तक पहुचजाता है | जीवन के द्रेषात्मकभाव , क्रोध , शोक , भय , बीभत्स आदि की रोद्र , करुण , भयानक और बीभत्स रसो में स्थापित की गई है | भगवान प्रति प्रेम यह भावो से अधिक श्रेष्ठ और आनंद देनेवाला है |

वेष्णवाचार्य भक्ति रस को सबसे श्रेष्ट रस के रूप में स्वीकार करते है |रूप गोस्वामीने भक्ति रस को रसराज श्रुगार से श्रेष्ट माना है |भक्ति रसमें बहुविध भावनाओं का जितना मिश्रण दीखता है |इतना अन्य रसमें नही होता |जिस रसमें भावना औ का जितना प्रमाण अधिक उतना अधिक प्रभावक ओर आस्वाध बनता है | वस्तुत : भागवत सस्पशँ को प्राप्त करके सभी भाव विभिन्न प्रकारके भावलोक से दिप्तीवान होता है |और उतम आस्वाध से हि पूणँ होता है |

वस्तुत: भक्ति रस इतना व्यापक उदात और चमत्कारक्षम है कि शुगार रस भी उसके सामने क्षुद लगता है |- उज्वलनीलमणि में कहा है –

अत्रेव परमोत्कषँ श्रुङ्गरस्य प्रतिष्टित |तथा च मुनि बहुवार्यते यत : खलु यत्र पुच्छन्नकामुक्त्व च |या च मिथो दुलभता सा परमा मन्मथस्य रति :| लधुत्वमत्र यत्पोत्क ततु प्राकूतनायके | न कृष्णे रसनियासस्वादाथमव तारिणी ||

शृंगाररस का आलबन यह लोक ही है | जब भक्तिरस का आवलंबन अवतारी राम आदि देव श्रेणी होती है |इस दष्टि से भी भक्ति रस शुगार रससे श्रेष्ट है |

आदवधनाचयने भी भक्ति रसास्वाद को सर्वोतम कहा है –

या व्यापारवती रसान रसयितुं काचित कविना नवा दष्टियॉ परिनिष्ठिताथॅ विषयोंनमेषा च वैपश्चिती | ते दृ अण्यवलम्ब्य विश्वामनिशं निर्वणॅयन्तो वयम् | श्रान्ता नैव च लब्धमब्धिशयंन त्व द्भ्भक्तितुल्यं सुखम ||

पुरातन ऋषियो तथा साहित्य चायॅा ने भी स्वीकृत किया है कि अज्ञानावरण से रहित आनन्द स्वरुप चेतन्य से युक्त रति आदि स्थायीभाव हि रस है | उपनिषद और अग्निपुराण के उद्धरणों ने रसजन्य आनन्द को ब्रहमनन्द-सहोदर माना है | मूलत: ब्रह्मानंद ही रसके रसत्वका मुल तत्व है | शृंगारादी नव रसं तो केवल ब्रह्मानंद- सहोदर है | भक्तिरस और ब्रहमानन्द तत्वत एक ही है | भक्तिरस भारतीय वाद्ग्मय में आदि रस है | जिसमे से अनायास सभी रसो का अंतभॉव सहज संभव है | भक्तिरस भारतीय सर्वश्रेष्ठ प्रतिस्थापक श्री रूप गोस्वामीने यह अलोकिक दिव्य रस – राह की व्यापक और असीम पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि मधुररस अपार सागर कि समान अतल,अपार और दुविग्राह है | उन्होंने अलोकिक दिव्य रस-राह रसाणॅव के तर पर खड़ा रहके उसका केवल स्पशँ ही किया है |

अतलत्वाद पटत्वादाप्तोडसो द्रुविग्राहताम् |
स्पृष्ट: पर तटस्येन रसाब्धिमॅधुरो मया ||

५. साहित्य दर्पण -३-१८६

६. उज्ज्वल नीलमणी,नायक भेद प्रकरण श्लोकें -१६-१८

*उज्ज्वल नीलमलि संजोग-भेद प्रकाश श्लोक-69-607

प्रेम और भक्तिरस के पवित्र जल में स्नान किये बिना हमारा जीवन सुख-शान्तिमय नही बन सकता | कलेशों और दुखो से मुक्त होने का सबसे सुलभ और सुगम उपाय यह भागवत भक्तिरस ही है | श्रीमद्भागवत का पादुर्भाव ही इस लिए हुआ है कि वह संसार के भय को नष्ट कर सच्चा सुख व शांति प्रदान करे –

कालव्यालमुखग्रासत्रासनिर्णाशहेतवे |
श्रीमाद्भागवतं शास्त्रं कलों कीरेण भाषितं ||

इसलिए यदि भय और चिंता से बचना चाहते है तो श्रीमद्भागवत का उत्तर है –

तस्माद भारत सर्वात्मा भगवान हरिरिश्वर: |
श्रोतव्य: किर्तितव्यश्च स्मर्तव्यश्चेच्छताभयम ||

यही भारतीय समाज को श्रीमद्भागवत का संदेश है |

सन्दर्भ - ग्रंथ सुची

श्रीमद भागवतम महापुराणम्

प्रकाशक - चोखम्बा संस्कृत प्रतिप्ठान

34-17 जवाहरनगर बंगलो रोड, दिल्ली - 110007

।महाभारत

प्रकाशक - गीता प्रेस, गोरखपुर

।अथर्ववेद

प्रकाशक - (मधुर जयोत ट्रस्ट संचालित)

वेदप्रकाशन समिति

।ऋग्वेदसंहिता

प्रकाशक - ब्रह्म वर्चस, शातिपुरा, हरिद्वार(उ.प्र.)

।संस्कृत साहित्य का परिचय

प्रकाशक - बाबुभाई हालचंद शाह

पार्श्व पब्लिकेशन

निशापोल, झवेरीवाड, रिलिफ रोड, अहमदाबाद - 380001

।108 उपनिषद

प्रकाशक - युग निर्माण योगना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथूरा

।साहित्यदर्पण

प्रकाशक मोतीलाल बनारसी दास

पा. यू.ए बंगलो रोड, जवाहरनगर, दिल्ली - 110007

।काव्यप्रकाश

प्रकाशक -भारतीय विद्या प्रकाशन

कधौडीगली, वाराणसी - 221001

।काव्यादर्श

प्रकाशक- चोखम्बा विद्याभवन चोक,
(बनारस स्टेट बेंक भवन के पीछे)
पो.बो. नं. 1069, वाराणसी-221001

।अथर्ववेदीन दर्शन

प्रकाशक डो. राधेश्याम शुक्ल
प्रतिभा प्रकाशन,29-5 शक्तिनगर, दिल्ली - 110007

।अष्टाध्यायी

प्रकाशक -गोपाल कृष्ण ट्रस्ट
गांधीग्राम, जूनागढ - 362001

।अग्निपुराण

प्रकाशक -सस्ता साहित्य वर्धक कार्यालय
ठे. भद्र के पास, अहमदाबाद (प्रिन्सेस स्ट्रीट - मुंबई)

।श्री रामचरित मानस

प्रकाशक - गीता प्रेस, गोरखपुर - 273005
गोविन्द भवन कार्यालय (कोलकता संस्थान)

।नाटय शास्त्रम्

प्रकाशक - श्री अश्विनभाई बी शाह
सरस्वती पुस्तक भंडार
रतनपोल, हाथीखाना, अहमदाबाद - 380001

।श्री वाल्मिकी रामायण

प्रकाशक -सस्ता साहित्य वर्धक कार्यालय
ठे. भद्र के पास, अहमदाबाद (प्रिन्सेस स्ट्रीट - मुंबई)

।अभिनव भागवत

प्रकाशक - महावीर साहित्य प्रकाशन मंन्दिर
हठीभाईनी वाडी, दिल्ली दरवाजा बहार, अहमदाबाद - 380004

।श्रीमदभागवत

प्रकाशक - सस्ता साहित्य वर्धक कार्यालय
ठे. भद्र के पास, अहदाबाद (प्रिन्सेस स्ट्रीट - मुंबई)

।ऋग्वेद संहिता

प्रकाशक - वसन्त श्रीपाद सातवालेकर
स्वाध्याय - मण्डल, डाकगृह (पारडी)

।भारतीय संस्कृत में गीतात्रय तात्विक अभिगम

प्रकाशक - पिश्म बुक्स (इन्डीया)
दुकान नंबर -120, घाटगेट रोड, जयपुर - 302003

।भारतीय दर्शनेषु कैवलायाव धारणा

प्रकाशक - रचना प्रकाशन
57, नाटाणी भवन, मिश्र राजाजी का रास्ता, चांदपोल बाजार, जयपुर - 302001

।मनुस्मृति - कूलभूल भट्ट विरचित
मन्पर्थ मुक्तावली सहित
निर्णयसागर, बम्बई - 1920
।रसगंगाधर - (जगन्नाथ) (चन्दिका संस्कृत हिन्दी व्यारव्योपेत)
प्रकाशक - चौखम्बा विद्याभवन,
वाराणसी - 1955
।छान्दोग्य उपनिषद -
निर्णयसागर, बम्बई - 1920
।तैतिरीय उपनिषद
प्रकाशक - सस्ता साहित्य वर्धक कार्यालय,
ठे. भद्र के पास, अहमदाबाद
।पद्मपुराणम्
आनन्दाश्रम मुद्रणालय,
पुना शक 1815
।ध्वन्यालोक
अभिनव गुप्त विरचित लोचन व्याख्या सहित
निर्णय सागर बम्बई - 1911
।अग्नीनीलमणि (रुप गोस्वामी)
श्रीरु प गोस्वामी विरचिंत लोचन रोचिनी तथा विश्वनाथ चक्रवती कृत आनन्द चन्दिका व्याखासहित, निर्णय सागर, बम्बई - 1932
।अध्यात्म रामायणम् -
हिन्दी टीका सहित
खेमराज श्रीकृष्णदास श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बम्बई - 1989
।नारद पग्धरात्रम (भारद्वाज सहिता)
तत्वप्रकाशिका हिन्दी व्याख्या सहित,
खेमराज श्रीकृष्णदास, श्रीवेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बम्बई - 1990
।नारदभक्तिसूत्रम (नारद)
गीताप्रेस, गोरखपुर, वि.सं.- 2023
।भगवदभकित रसायनम (मधुसुदन सरस्वती)
मधूसूदन विरचित मतलिल्का टीका सहित,
कुन्नम्परम्प शंकरन्नम्पतिरी, बनारस - 1950
।शादिल्य भकितसूत्रम (शादिल्य)
गीताप्रेस, गोरखपुर, वि.स. 2020
।श्रीमदभागवत महापुराणम
(हिन्दी अनुवाद सहित)
गीताप्रेस गोरखपुर - 1941
।श्वेताश्वतर उपनिष्द
निर्णय सागर, बम्बई - 1948
।सिद्धान्त कौमुदी (भट्टोजीदीक्षीत)

तत्वबोधिनी तथा सुबोधिनी व्याख्या सहित
निर्णय सागर, बम्बई 0 1952
।दशरु पक - (घनंजय)
सरस्वती प्रकाशन,
निशापोल झवेरीवाड, रिलिफरोड, अहमदाबाद - 1
।श्रीमदभगवदगीता
- अश्विनभाई बी. शाह
प्रकाशक - सरस्वती पुस्तक भंडार
रतनपोल, हाथीखाना, अहमदाबाद - 380001
।शीवमहिम्न स्तोत्रम
प्रकाशक - अश्विनभाई बी शाह
सरस्वती पुस्तक भंण्डार
रतनपोल, हाथीखाना, अहमदाबाद - 380001
।श्रीमद भागवत पुराण में भक्ति रस का शास्त्रीय निरुपण
प्रतिभा प्रकाशन
29-5, शक्तिनगर, दिल्ली - 110007
।श्री हरिभक्तिरसामृतसिन्धु (रुप गोस्वामी)
श्रीरु प गोस्वामी विरचित दुर्गमसंगमनी टीका सहित अच्युत ग्रन्थमाला कार्यालय
काशी, वि.सं. 1988
।भक्तिनो मर्म (गौतम पटेल)
प्रकाशक - संस्कृत सेवा समिति
वालम - ए-111 स्वातंत्र्य सेनानीनगर, न